छत्तीसगढ़ के संतों का हिन्दी भाषा के विकास में अवदान

डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि'
शोध निर्देशक, हिन्दी
विश्वविद्यालय शिक्षण विभाग
सन्त गहिरा गुरु विश्वविद्यालय
अम्बिकापुर सरगुजा (छ.ग.)

संजय मिंज
शोधार्थी हिन्दी
विश्वविद्यालय शिक्षण विभाग
संत गहिरा गुरु विश्वविद्यालय
अम्बिकापुर सरगुजा (छ.ग.)

हिन्दी भाषा के विकास का इतिहास 1000 वर्ष पुराना माना जाता है। हिन्दी को शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से विकसित माना जाता है। 1000 ई. के लगभग इसकी स्वतंत्र रूप परिलछित होने लगा था, जब से अपभ्रंश भाषा सहित्यों में उपयोग होने लगा था। यही भाषा आगे विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के में अभिहित हुई। हिन्दी भारत की ऐसी एकमात्र भाषा है, जिसको अत्यधिक लोग समझते, जानते और बोलते हैं। हिन्दी भारत की राष्ट्र भाषा के साथ ही साथ सम्पर्क भाषा और राज्य भाषा भी है। भाषा का कोई जाति, आकार, रंग–रूप और स्वरूप नहीं होता है। भाषा को केवल सुन–समझकर महसूस किया जा सकता है। हिन्दी छत्तीसगढ़ के साथ–साथ सम्पूर्ण भारत में सभी के साथ सम्पर्क स्थापित करने का एकमात्र भाषा है। भारत वर्ष के सभी क्षेत्रों में अघ्ययन–अध्यापन एंव साहित्य लेखन तथा शिक्षण संस्थानों में पठन–पाठन का कार्य हिन्दी में वृहद स्तर पर हो रहा है। आज हिन्दी भारत ही नहीं अपितु विश्व स्तर पर अपनी अलग पहचान बना चुकी है। राजमणि शर्मा ने अपनी पुस्तक '' हिन्दी भाषाः इतिहास और स्वरूप में लिखा है– 'आदिकाल से ही हिन्दी संतों–महात्माओं, व्यापारियों, सैनिकों और तीर्थयात्रियों के द्वारा समस्त भारत में व्याप्त होकर भारत की राष्ट्रीय आत्मा की अभिव्यक्ति में समर्थ हो चुकी है।''

हिन्दी भाषा के विकास में संतों, महात्माओं तथा उपदेशकों का अवदान को भी कम नहीं माना जा सकता है, क्योंकि वे जनता के अत्यन्त समिप होते हैं। इनका जनता पर बृहद एंव सीधा प्रभाव होता है। उत्तर भारत के भक्तिकाल के प्रमुख भक्त कवि सूरदास, तुलसीदास तथा मीराबाई आदि के भजन जनता के द्वारा बड़े ही भक्ति से गाए जाते हैं। छत्तीसगढ़ के संतों ने भी हिन्दी भाषा के विकास में अपना महत्वपूर्ण अवदान दिया है। जिनमें मुख्य रूप से संत धनी धर्म दास जी, संत महाप्रभु वल्लाभाचार्य, संत गुरु घासी दास तथा संत गहिरा गुरु जी हैं। हिन्दी भाषा सरल, मधुर, सुगम और स्पष्ट है, इस कारण संतों–महात्माओं द्वारा प्रवचन भी हिन्दी में ही दिये जाते हैं। ताकि अधिक से अधिक लोग इसे समझकर ग्रहण कर सकें। हिन्दी भाषा की दिलचस्प बात यह है कि यह जहॉ बोली और उपयोग की जाती है वहॉ का स्थानीय प्रभाव भी उस भाषा पर दृष्टिगत होता है।

छत्तीसगढ़ के संतों का अवदान

विज्ञान और तकनीक के युग में मनुष्य ने कितनी भी उन्नति क्यों न कर ली हो परन्तु मानवीय संवेदनाओं, भावनाओं, भाईचारे और मानवता को बचाये रखने के लिए हमारे छत्तीसगढ़ के संतों ने हिन्दी भाषा के विकास में अतुलनीय अवदान दिया है। भाषायि भेदभाव कभी भी देश को उपर उठने नहीं देता है। युवा पीढ़ी को मानव जीवन के उद्देश्य को समझने के लिए छत्तीगढ़ के संतों द्वारा दी

गई शिक्षाओं को आत्मसात करना चाहिए। ज्ञान एक शक्ति है, जिसके द्वारा मनुष्य खुद को उपर उठाता है। भारतीय समाज में दलित समझे जाने वाले निम्न जाति के लोग प्राचीन काल से ही निम्न नहीं थे बल्कि कुछ लोगों ने उन्हें नीच बनाया। अच्छे ज्ञान, प्रेम और हिन्दी भाषा के माध्यम से भारत को विश्व गुरु बनाया जा सकता है।

हिन्दी भाषा के विकास को प्रायः तीन भागों में विभाजित किया जाता है – 1. प्राचीन हिन्दी (1000–1500 ई.), 2. मध्यकालीन हिन्दी (1500–1800 ई.) और 3. आधुनिक हिन्दी (1800 ई –अभी तक)। छत्तीसगढ़ में जब संतों का अभिर्भाव हुआ उस समय यहां हिन्दी भाषा के विकास का दूसरा भाग मध्यकालीन हिन्दी का था। मघ्यकालीन हिन्दी भाषा के विकास काल में संतों और भक्तों नें ब्रजभाषा एंव अवधी भाषा का प्रयोग किया है। जैसे– कबीर, जायसी, तुलसीदास, सूरदास और मीराबाई आदि भक्ति काल के प्रसिद्ध संत कवि थे।

संत धनी धर्मदास

निर्गुण काव्य धारा के संत कबीर दास के प्रमुख शिष्य, उनके उत्तराधिकारी एंव छत्तीसगढ़ में कबीर पंत के ज्येष्ठ शाखा के प्रवर्तक संत धनी धर्मदास जी को छत्तीसगढ़ के प्रथम संत होने का गौरव प्राप्त है। भारत की पावन धरती पर संत धनी धर्मदास जी का अभिर्भाव सन् 1502 ई. को वर्तमान मध्यप्रदेश के बांधावगढ़ में सुप्रसिध्द वैष्य मनमोहन जी के घर हुआ। संत धनी धर्मदास और उनकी पत्नी सुलक्ष्णादेवी सन् 1570 ई. में बांधवगढ़ में संत कबीर से शिक्षा प्राप्त कर जीवन प्रयन्त कबीर पंथ की अगवाई का आशिर्वाद भी प्राप्त किया और छत्तीसगढ़ आकर कबीर पंथ को आगे बढ़ाया। बांधवगढ. प्राचीन काल में कोसल (छत्तीसगढ़ का प्राचीन नाम) राज्य के अंतर्गत था। धनी धर्मदास जी ने छत्तीसगढ़ी शब्दों और गीत शैलियों के साथ–साथ हिन्दी भाषा के विकास में भी महत्वपूर्ण अवदान दिया। अपनी धार्मिक गतिविधियों के लिए उन्होंने छत्तीसगढ़ को चुना था। अनकी विशेषता थी कि उन्होंने छत्तीसगढ़ को उसकी सम्पूर्ण समग्रता के साथ अपनाया था। यहाँ की लोक भाषा, लोक संस्कति, लोक परंपराओं के साथ हिन्दी भाषा को भी अपनाया था। उन्हें छत्तीसगढ़ का प्रथम कवि के रूप में भी जाना जाता है।

धनी धर्मदास जी को ही कबीर साहब के पदों का संकलन और उन्हें लिपिबद्व करने श्रेय प्राप्त है। धनी धर्मदास जी ने आध्यात्मिक चेतना के विस्तार उच्च वर्ग को नहीं, अपितु दलित और पीड़ित सर्वहारा वर्ग को चुना। धनी धर्मदास ने कबीर पंथ को पंथ के रूप में ठोस आधार पर चिंतन के लिए प्रचुर–साहित्य प्रदान किया, उसके कारण कबीर पंथ की छत्तीसगढ़ शाखा देश ही नहीं, विदेशों में प्रख्यात होकर दृढ़तापूर्वक स्थापित हो गई। संत कवि धर्मदास का सम्पूर्ण काव्य सद्गुरु की उपासना का काब्य है। उनके काब्य की भाषा पूर्वी हिन्दी है, जिससे कहीं–कहीं उर्दू, फारसी के शब्द भी पाये जाते हैं। हिन्दी के अतिरिक्त बघेलखण्डी और छत्तीसगढ़ी भाषा में भी उनकी रचनायें मिलती हैं। वस्तुतः

लोगों तक अपनी बात पहुॅचाने के लिए उन्होंने लोक जीवन के निकट की भाषा का प्रयोग किया है। उनके काव्य का लाकस्पर्शी अंश हिन्दी साहित्य की बहुत बड़ी उपलब्धि है। इसीलिए वे सच्चे अर्थो जन–भाषा के कवि कहे जाते हैं। उनके काव्य में प्रकृति संवेदना का व्यापक फलक भी दिखाई पड़ता है।

संत धनी धर्मदास जी की रचनाओं का सर्वाधिक प्रभाव छत्तीसगढ़ में पड़ा है। इस समय हिन्दी भाषा के विकास का दूसरा चरण मध्यकाल का समय था। पूर्वी हिन्दी इनकी काव्य भाषा थी, जिस कारण उर्दू, फारसी के शब्दों जगह–जगह मिलना स्वभाविक है। इनके द्वारा अपनाये गये लोक गीतों की शैली बहुत ही मधुर, सरस, गेय और लालित्यपूर्ण हैं। इनकी रचनाएँ हिन्दी के अलावा बघेलखण्डी और छत्तीसगढ़ी भाषा में भी मिलती है। धनी धर्मदास जी के समयकाल में यहां की जनता अत्यन्त ही अशिक्षित, अंधविश्वासी और नशापान में लिप्त रहती थी। जनता को जागृत करने और अंधविश्वास तथा नशापान से बाहर निकालने के लिए उन्होंने लोक भाषा में अपनाी वाणीयों को लोगों तक पहुंचानें लगे। धीरे–धीरे अपने क्षेत्र में विस्तार करने के लिए तथा और अधिक लोगों तक अपनी तथा कबीर दास की बानियों को पहुंचाने के लिए हिन्दी तथा छत्तीसगढ़ी भाषा का प्रयोग धीरे–धीरे करने लगे। कुछ समय बाद् हिन्दी भाषा का पूर्ण रूप से उपयोग करने लगे। इनकी शब्दावली का भी संतों में बड़ा आदर है। इनकी रचना थोड़ी होने पर भी कबीर की अपेक्षा अधिक सरल भाव लिए हुए हैं, उसमें कठोरता और कर्कशता नहीं है। इन्होंने 'खण्डन–पण्डन' से विशेष प्रयोजन न रख प्रेमतत्व को लेकर अपनी वाणी का प्रसार किया।

धनी धर्मदास जी की अंगिक रचनाएँ –

1 फूलन सेजिया लगावल।

2 पहले गवन पिया लवले।

3 सुतली मैं रहली अपनां

4 कते हे दूर गुरु फुलवाड़ी।

5 कौने देलकै काठो के कंठी।

6 अलप वयस दुख भारी कइसे हम खेलीब हे।

7 ब्याह जे हमरो करि दिहो बाबा

धनी धर्मदास जी की कुछ पद के बोल –

1 हप सत्त नाम के बैपारी .....

2 झरिलागै महलिया, गगन घहराय.....

3 खेलत रहलों बाबा चौवरिया.....

4 सूतल मैं रहलौं सखियाँ.....

5 नाम क रंग मंजीठ, लगै छूटै नहिं भाई.....

महाप्रभु श्रीवल्लाभाचार्यजी –

भक्तिकालीन सगुणधारा की कृष्णभक्ति शाखा के आधारस्तम्भ एंव पुष्टिमार्ग के प्रेणेता थे। उन्हें अग्नि का अवतार कहा गया है। वे वेदशास्त्र में पारंगत थे। वल्लभाचार्य का प्रादुर्भाव सन् 1479 ई. में दक्षिण भारत के कांकरवाड ग्रामवासी तैलंग ब्रहमण श्रीलक्षमणभट्ट जी की पत्नि इलम्मागारू के गर्भ से सन् 1479 ई. को हुआ था। वर्तमान में यह स्थान छत्तीसगढ. के रायपुर के निकट चम्पारण्य है।

की स्थापना की, जो आज दार्शनिक दृष्टि से शुद्धाद्वैतवाद कहलाता है तथा दार्शनिक मत शुद्धद्वैत है। इनका संप्रदाय आज स्वतंत्र संप्रदाय के रूप में मशहूर है। इन्होंने भागवत्–प्राप्ति का साधन भक्ति को माना है, भगवान के पोषण को ही भक्ति का संबल मानना चाहिए, इसलिए इनके मत को 'पुष्टिमार्ग' कहा जाता है। भगवत कृपा या अनुग्रह को पुष्टि कहा जाता है। भागवान के अनुग्रह या कृपा का नाम ही पोषण है, जो भक्त स्वंय को भगवान के आश्रय पर छोड़ दे वही सच्चा भक्त है। श्रीवल्लाभाचार्य जी को भक्तिकाल के सगुण काव्यधारा के आधार स्तंभ के रूप में जाना जाता है। सगुण भक्ति में अवतारवाद को विशेष महत्व दिया गया, जिससे उस समय में जनमानस के हदय में राम और कृष्ण के लिए विशेष स्थान बना। वल्लाभाचार्य जी ने सामन्ती जड़ताओं का विरोध करते हुए जीवन के प्रति आवश्यक राग व रंग पर मानव जीवन को भरोसा दिलाया है। इन्होंने एक ओर प्रेम एंव स्नेह चित्रण के माध्यम से समाज को बहुत मजबूत करने की प्रयत्न की तो दूसरी ओर मानव की जन्मजात स्वाधीनता में बाधक वास्तविक स्थिति का प्रतिरोध किया है। इन्होंने भक्ति का अनुसंधान करते हुए तीन मार्गों – मर्यादामार्ग, प्रवाहमार्ग एंव पुष्टिमार्ग का उल्लेख किया है। तीनों मार्गों में इन्होंने सर्वाधिक बल पुष्टिमार्ग पर दिया। पुष्टिमार्ग भगवान के कृपा का मार्ग है। इस मार्ग के पथिक किसी सांसारिक या बाहरी सामग्री का सहारा नहीं लेते हैं।

वल्लाभाचार्य जी ने अपने ज्ञान का पूर्ण रूप से उपयोग हिन्दी भाषा के विकास के लिए किया। इन्होंने अपनी बानियों को लोगों तक पहुंचाने के लिए ब्रजभाषा तथा संस्कृत भाषा का भरपूर उपयोग किया, और आगे चलकर इसी ब्रजभाषा से हिन्दी भाषा के विकास हुआ। ये भक्तिकालीन संत

कवि थे, इनके काल में संत अपनी बानियों को जनमानस तक पहुंचाने के लिए भक्ति काव्य का सहारा लिया है, जिस कारण भक्ति के साथ–साथ हिन्दी भाषा का भी विस्तार होता गया। इन्होंने कृष्ण काव्य में प्रेम के साथ मानव जीवन को अंधविश्वास के अंधकार से निकालने के महत्वपूर्ण कथन होते थे। ये संत भाषा की दृष्टि से अत्यन्त सश्क्त माने जाते हैं, इनकी भाषा माधुर्य, सरसता, कोमलता आदि गुणों के कारण व्यापक काव्य व जनमानस की भाषा के रूप में सम्मान प्राप्त कर चुकी है। इन्होंने अपने कई रचनाओं के माध्यम से अपनी बानियों के प्रचार–प्रसार के साथ–साथ हिन्दी भाषा के विकास में भी महत्वपूर्ण अवदान दिया है।

रचनाएँ– संत वल्लाभाचार्य जी ने कई किताबें लिखी हैं, परन्तु व्यवस्था के अभाव में कई आज उपलब्ध नहीं है इनके प्रमुख ग्रंथों में ब्रम्हासूत्र का 'अणु भाष्य' और 'वृहद भाष्य', शिक्षा श्लोक, गायत्री भाष्य, पत्रावलंवन, भागवत की 'सुबोधिनी', टीका, भागवत तत्वदीप निबंध, एंव पूर्व मीमांसा भाष्य, पुरुषोत्तम सहस्त्रनाम, दशमस्कंध अनुक्रमणिका, त्रिविध नामावली, संन्सास निर्णय, निरोध लक्षण सेवाफल, यमुनाष्टक, बाल बोध, सिद्धांत मुक्तावली, पुष्टि प्रवाह मर्यादा भेंट और सिद्धांत, जलभेद, नवरत्न आदि ग्रंथों की रचना की थी।

संत गुरु घासीदास –

गुरु घासीदास का जन्म 18 दिसम्बर 1756 ई. में छत्तीसगढ़ के रायपुर जिले में गिरौदपुरी नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम महंगुदास तथा माता का नाम अमरौतिन था और उनकी धर्म पत्नि का नाम सफुरा बाई था। इनको ज्ञान की प्राप्ति छत्तीसगढ़ के रायगढ़ जिला के सारंगढ़ तहसील में बिलासपुर रोड स्थित एक पेड़ के नीचे साधना करते समय मिला था। जहाँ आज गुरु घासीदास पुष्प वाटिका की स्थापना की गई है। गुरु घासीदास का जन्म ऐसे समय हुआ जब समाज में छुआछूत, ऊँचनीच,झूठ–कपट का बोलबाला था, बाबा ने ऐसे समय में समाज में समाज को एकता, बंधुत्व तथा सभी को अपने समान समझने का विचार प्रकट किया। घासीदास की यथार्थ के प्रति अखंडित विश्वास के कारण से ही इन्होने बचपन में कई चमत्कार दिखाए, जिसका लोगों पर काफी प्रभाव पड़ा था।

संत गुरुघासीदास जी ने समाज में चारो ओर फैले जाति संबंधी विषमताओं को नकारा, ब्राम्हणों के प्रभुता को नकारा और कई वर्णों में बांटने वाली जाति व्यवस्था का विरोध किया। उनका मानना था कि समाज में हर एक मनुष्य समाजिक रूप से बराबर हैसियत रखता है। गुरु घासीदास ने मूर्तियों की पूजा को परित्यक्त किया था। वे मानते थे कि उच्च वर्ण के लोगों और मूर्ति पूजा में गहरा संबंध है। संत गुरुघासीदास जी जानवरों से भी प्रेम करने की शिक्षा देते थे। वे उन पर कठोरता सहित बर्ताव करने के विरूद्ध थे। सतनाम पंथ के अनुरूप खेती के लिए गायों का उपयोग नहीं किया जाना

चाहिए। गुरु घासीदास के संदेशों का समाज के पिछड़े जनसमूह में गहरा असर पड़ा। छत्तीसगढ़ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सेनानी वीर नारायण सिंह पर भी गुरु घासीदास के सिद्धांतों का गहरा प्रभाव था। गुरु घासीदास के संदेशों और उनकी जीवनी का प्रसार पंथी गीत व नृत्यों के माध्यम से भी व्यापक रूप से हुआ। यह छत्तीसगढ़ की अति प्रसिध्द लोक विधा भी मानी जाती है। गुरु घासीदास ने समाज के लोगों को सत्वगुण संपन्न जीवन जीने का भाव मन में जगाया। उन्होंने न सिर्फ सत्य की उपासना की परन्तु समाज में नवीन जागरण पैदा की और अपनी साधना से हस्तगत विद्या और योग्यता का इस्तेमाल मनुष्यता की सेवा के कार्य में किया।

संत गुरु घासीदास जी का हिन्दी भाषा के विकास में बहुत ही महत्वपूर्ण अवदान रहा है। इनके कार्यकाल के समय हिन्दी भाषा के विकास का दूसरा काल मध्यकाल चल रहा था। संत घासीदास अपनी कथनों को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचाने के लिए तथा ज्यादा लोग समझ सकें इसके लिए हिन्दी भाषा का उपयोग करते थे। आम जनता भी संतों की प्रवचनों को समझने के लिए हिन्दी भाषा सीखने लगे। संत गुरु घासीदास क्षेत्र विशेष के लोगों को छत्तीसगढ़ में ही प्रवचन देते थे, पर धीरे–धीरे भक्तों की संख्या में विस्तार होने लगा और बाहरी लोग छत्तीसगढ़ी बोली को समझने में असर्मथ रहते थे। इसी कारण ये संत अपने प्रवचन हिन्दी में देना प्रारंभ कर दिये। कुछ दिनो में ही घासीदास के भक्तों के संख्या काफी बढ़ गयी और साथ ही साथ हिन्दी भाषा का भी विस्तार हो गया। ये अपने प्रवचन में सहज, मधुर और जनता के निकट की हिन्दी भाषा का प्रयोग करते थे।

सप्त सिद्धांत – इनके सात वाणी सतनाम पंथ में सप्त सिद्धांत के रूप में स्थापित हैं, जिनमें–

1 सतनाम पर विश्वास रखना। (सत्य और अहिंसा)

2 जीव हत्या नहीं करना। (धैर्य)

3 मांसाहार नहीं करना। (लगन)

4 चोरी, जुआ से दूर रहना। (करूणा)

5 नशा सेवन नहीं करना। (कर्म)

6 जाति–पाँति के प्रपंच में नहीं पड़ना। (सरलता)

7 व्यभिचार नहीं करना। (व्यवहार)

इनके द्वारा दिये गये उपदेशों से समाज के असहाय लोगों में आत्मविश्वास, व्यक्तित्व की पहचान और अन्याय से जुझने की शक्ति का संचार हुआ। सामाजिक तथा आध्यात्मिक जागरण की आधारशिला स्थापित करने में ये सफल हुए और छत्तीसगढ़ में इनके द्वारा प्रवर्तित सतनाम पंथ के आज भी लाखों अनुयायी हैं।

संत गहिरा गुरु – वनवासियों के आराध्य परम् पूज्य संत गहिरा गुरु जी का जन्म श्रावण अमावश्या सन् 1905 ई. को छत्तीसगढ़ के जिला रायगढ़, विकासखण्ड लैलूंगा के ग्राम गहिरा में हुआ था। दीन–हीन, गरीब–दुखी लागों की सेवा करना ही इनका परम धर्म था। बचपन से ही संत गहिरा गुरु जी लोक से मिली शक्तियों की तरफ आकृष्ट थे, जिसके परिणामस्वरूप औपचारिक विद्या प्रायः विद्या तक ही रही थी। गहिरा गुरु की संकल्पशीलता, सतत् साधना तथा निःस्वार्थ सेवा के विचार ने छत्तीसगढ़ के रायगढ़, सरगुजा, बिलासपुर, कोरबा जिला तथा झारखण्ड के रांची जिले जनजातिए क्षेत्रों में एक बड़ी सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति कर दिखाया था। वनवासियों व पिछड़ी जातियों के उत्थान का लक्ष्य गुरु जी का था, उनकी आर्थिक एंव सामाजिक संस्कृति पर कड़ा प्रहार होता जा रहा था। उन्में से कई अपने धर्म एंव संस्कृति का छोड़कर ईसाई धर्म एंव संस्कृति की तरफ आकर्षित हो रहे थे।

संत गहिरा गुरु जी हिन्दी भाषा के अवदान में महत्वपूर्ण अवदान दिया है, क्योंकि वे जनता के काफी निकट थे। आम जनता की धर्म, संस्कृति एंव भाषा को जानते एंव समझते थे। वे समाज सेवा एंव भाषा के विकास का कार्य साथ–साथ किये। इनके समय में हिन्दी का आधुनिक समय आ पहुंचा था, हिन्दी अपनी पूर्ण रूप मे आ चुकी थी। संत गहिरा गुरु जी अपनी वचनों को आम जनता तक पहुंचाने के लिए हिन्दी भाषा की ही उपयोग किया करते थे। इनके कथनों एंव बानियों को समझने के लिए आम जनता हिन्दी बोलना व समझना सीखना शुरू कर दिया, और धीरे–धीरे बहुत ही अच्छी तरह हिन्दी बोलने और समझने लगे। इन्होंने ईश्वर की उपसना, धर्म और सद्ज्ञान के द्वारा आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन का संदेश दिया। मानव जाति को शाँति, प्रेम तथा सद्भावना का अध्याय समझाने एंव सीखाने और अपनी संस्कृति–सभ्यता की सुरक्षा एंव उसकी अस्तित्व को बचाकर आगे बढ़ाने के उद्देश्य से उन्होंने वनवासी अंचलों में संस्कृत विद्यालय, आश्रम, विद्यालय और संस्कृत महाविद्यालय स्थापित किया। इस तरह संत गहिरा गरु जी ने भी हिन्दी भाषा के विकास में अपना महत्वपूर्ण अवदान दिया है।

निष्कर्ष

छत्तीसगढ़ के संत हिन्दी भाषा के विकास मध्यकालीन कालक्रम में आते हैं। इन्होंने पंथी गीत, संस्कृत, पूर्वी हिन्दी, छत्तीसगढ़ी, ब्रजभाषा, और अवधी भाषा के रूप में हिन्दी भाषा के विकास में अपना महत्वपूर्ण अवदान दिया है। इनमें कई संत अधिक शिक्षित नहीं होने के कारण इनका लिखित ग्रंथ और साहित्य आज उपलब्ध नहीं है। और कई संतों ने अनेक पत्र–पत्रिकाओं तथा सहित्य के द्वारा हिन्दी भाषा के विकास में अपना महत्वपूर्ण अवदान दिया है। छत्तीसगढ़ के संतों ने छत्तीसगढ़ के अतिरिक्त भारत के अन्य राज्यों में भी हिन्दी भाषा के अवदान में अपना महत्वपूर्ण अवदान दिया है। क्योंकि इन संतों के भक्त भारत के अन्य राज्यों में भी थे। संतों की प्रवचनों व बानियों सुनने और समझने के लिए

आम जनता संतों की भाषा सीखते थे। और संतों ने भी आम जनता की भाषा में ही प्रवचनो और बानियों को आम जनता तक पहुंचाने का प्रयास भी किया है।

संदर्भ ग्रंथ

1 चतुर्वेदी, परशुराम– ''उत्तरी भारत की संत परम्परा''/ प$_{c}$. 505

2 बड़थ्वाल, डॉ. पीताम्बरदत्त– ''हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय'' /प$_{c}$. 170

3 बड़थ्वाल, डॉ. पीताम्बरदत्त– ''हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय'' /प$_{c}$. 185

4 शूक्ल,आचार्य रामचन्द्र–''हिन्दी साहित्य का इतिहास''/प$_{c}$. 66

5 त्रिपाठी, शिवकुमार– ''अभिनव ऋषि, गहिरा गुरु रामेश्वर''/पृ. 12

6 शूक्ल,आचार्य रामचन्द्र–''हिन्दी साहित्य का इतिहास''/प$_{c}$. 74

7 आडिल,डॉ. सत्यभामा–''संत धर्मदास''/पृ. 388

8 खुबालकर,डॉ भारती–''साहनी निबन्ध माला महान् सन्त एंव महात्मा''/पृ. 36

9 डॉ. बलदेव/ मानस, जयप्रकाश/टंडन, रामशरण– ''तपश्वर्या एंव आत्म–चिन्तन गुरु घासीदास''/प्. 67